दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय तिथि: 12 जुलाई, 2024

रि.या.(सि.) 9467/2024

बलविंदर कौर और अन्य ..... याचीगण

द्वारा: डॉ. वी.पी. सिंह, सुश्री यशस्वी सिंह और श्री भगवान सिंह, अधिवक्तागण।

बनाम

दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा कुलपति एवं अन्य ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री मोहिंदर जे.एस. रूपल और श्री हार्दिक रूपल, दिल्ली विश्वविद्यालय के लिए अधिवक्तागण।

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति सुश्री ज्योति सिंह

निर्णय

न्या. ज्योति सिंह, (मौखिक)

1. यह रिट याचिका याचीगण, अर्थात, डॉ. संजीव कुमार वर्मा के विधिक उत्तराधिकारियों की ओर से भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत निम्नलिखित राहत की मांग करते हुए दायर की गई है:-

> *"(क) स्वर्गीय डॉ. संजीव कुमार वर्मा को 2010 से सैद्धांतिक पदोन्नति देने के लिए प्रत्यर्थीगण को रिट/आदेश/निर्देश जारी करें और प्रत्यर्थीगण को न्याय के हित में याचीगण को सभी परिणामी और प्रतिपूरक लाभों का भुगतान करने के निर्देश भी जारी करें।*
>
> *(ख) न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए याचीगण के पक्ष में कोई अन्य/अतिरिक्त रिट/आदेश/राहत पारित करें।"*

2. याचिका में तथ्यात्मक विवरण के अनुसार, याचिकाकर्ता सं. 1 के पति और याचिकाकर्ता सं. 2 और 3 के पिता स्वर्गीय डॉ. संजीव कुमार वर्मा को 19.09.1997 को महर्षि वाल्मीकि शिक्षा महाविद्यालय ('कॉलेज') में स्थायी व्याख्याता के रूप में नियुक्त किया गया था। तत्पश्चात्, विधिवत गठित चयन समिति की सिफारिशों के अनुसरण में दिनांक 09.02.2004 को वरिष्ठ वेतनमान में व्याख्याता के रूप में उनकी पदोन्नति हुई। दिनांक 12-10-2010 को चयन समिति द्वारा रीडर के पद पर पदोन्नति के लिए डॉ. संजीव कुमार वर्मा के मामले पर विचार किया गया था, किंतु अज्ञात कारणों से पदोन्नति नहीं की गई। याचीगण के अनुसार, कॉलेज के प्रधानाचार्य ने 23.01.2015 को दिल्ली विश्वविद्यालय के डीन कॉलेजों को पत्र लिखा और मेरिट प्रमोशन स्कीम, 1998 ('एम.पी.एस.') के तहत डॉ. संजीव कुमार वर्मा की पदोन्नति की सिफारिश की, इसके बाद 16.12.2015 और 29.02.2016 को सहायक

रजिस्ट्रार (कॉलेज) को अनुस्मारक जारी किया गया। 20.10.2016 को डीन कॉलेजेज, दिल्ली विश्वविद्यालय को एक और पत्र भेजा गया जिसमें डॉ. संजीव कुमार वर्मा की पदोन्नति की सिफारिश की गई और उनकी गंभीर चिकित्सा स्थिति से भी अवगत कराया गया, जिसके बाद 17.02.2017 को एक स्मरण पत्र भेजा गया।

3. यह प्रकथन किया गया कि 25.04.2017 को, कॉलेज में शासी निकाय की बैठक आयोजित की गई थी, लेकिन पदोन्नति का मुद्दा नहीं उठाया गया था। दुर्भाग्य से, डॉ. संजीव कुमार वर्मा का 19.11.2018 को निधन हो गया। याचीगण ने 21.09.2020 को प्रत्यर्थीगण को एक कानूनी नोटिस भेजा, जिसमें याचिकाकर्ता सं. 1 के पति की असामयिक मृत्यु के कारण मुआवजे और हर्जाने की मांग की गई और पदोन्नति लाभ जारी करने के लिए 05.04.2021 को एक और नोटिस जारी किया गया। याचीगण का कहना है कि इसके बाद, याचिकाकर्ता सं. 1 ने हस्तक्षेप करने के लिए सभी उच्च अधिकारियों को कई कानूनी नोटिस भेजे, अंतिम नोटिस 03.03.2022 को भेजा गया।

4. यह प्रकथन किया गया कि कॉलेज के प्रधानाचार्य ने 23.06.2022 को याचिकाकर्ता सं. 1 को लिखा था कि उनके पति की पदोन्नति का मामला शासी निकाय के समक्ष रखा गया था और विचाराधीन था। 08.06.2023 को, प्रधानाचार्य ने एम.पी.एस. के तहत याचिकाकर्ता सं. 1 के पति की पदोन्नति के संबंध में डीन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय को एक और पत्र भेजा।

5. दिनांक 08.06.2023 के पत्र के जवाब में, डीन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय ने दिनांक 26.06.2023 को एक पत्र भेजकर सूचित किया कि याचिकाकर्ता सं. 1 के पति के मामले पर विचार किया गया था और यह पाया गया कि वह रीडर/रीडर ग्रेड के पद पर पदोन्नति करने के पात्र नहीं थे क्योंकि उन्होंने अध्यादेश XVIII में प्रदान किए गए एम.पी.एस. के अनुसार पुनश्चर्या पाठ्यक्रम (रिफ्रेशर कोर्स) करने की आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया था, और नियमों के अनुसार आवेदक को चयन समिति द्वारा विचार की तारीख को विश्वविद्यालय / कॉलेज के रजिस्टर में और सक्रिय सेवा में होना चाहिए।

6. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि स्वर्गीय डॉ. संजीव कुमार वर्मा को सेवा में और जीवित रहने के दौरान रीडर के पद पर अवैध रूप से पदोन्नति से वंचित कर दिया गया था, जबकि वह 12.10.2010 से इसके हकदार थे जब उनके मामले पर एम.पी.एस. के तहत चयन समिति द्वारा विचार किया गया था। उनके मामले को कॉलेज के प्रधानाचार्य द्वारा कई बार सिफारिश की गई थी, इस तथ्य के बावजूद कि संबंधित अधिकारियों को यह भी सूचित किया गया था कि याचिकाकर्ता की स्वास्थ्य की स्थिति दिन-प्रतिदिन बिगड़ रही है, उनके साथ बहुत ही लापरवाही से व्यवहार किया गया।

7. श्री रूपल, प्रत्यर्थीगण/दिल्ली विश्वविद्यालय के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि रिट याचिका विलंब और लापरवाही के कारण से वर्जित है, यदि कोई वाद हेतुक है, जो 2010 में उत्पन्न हुआ था जब याचिकाकर्ता सं. 1 के अनुसार, उनके पति का चयन समिति द्वारा विचार किया गया था, लेकिन

सिफारिशों को उनके तार्किक अंत तक नहीं ले जाया गया था। स्वर्गीय डॉ. संजीव कुमार वर्मा का निधन 19.11.2018 को हुआ था, लेकिन अपने जीवनकाल में, उन्होंने कभी भी विधिक उपायों का सहारा नहीं लिया। यह सच हो सकता है कि वह कई बीमारियों से पीड़ित था, हालांकि, वह *पैरोकार* के द्वारा न्यायलय का रुख कर सकता था। यह आग्रह किया जाता है कि यह सुस्थापित विधि है कि विलंब और लापरवाही मान्यता प्राप्त सिद्धांत है और न्यायालयों को किसी ऐसे व्यक्ति के बचाव में नहीं आना चाहिए, जो अपने अधिकारों के बारे में जागरूक नहीं है और विलंब और लापरवाही तब और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है जब मांगी गई राहत पदोन्नति और अन्य कर्मचारियों की वरिष्ठता पर परिणामी प्रभाव से संबंधित हो, जिन्हें इस बीच पदोन्नति प्रदान की गई होती और उच्च वरिष्ठता वाले स्थान पर रखा गया होता।

8. याचीगण के लिए और प्रत्यर्थीगण/दिल्ली विश्वविद्यालय के लिए विद्वान अधिवक्तागण को सुना।

9. रिट याचिका में तथ्यात्मक विवरण से यह स्पष्ट है कि याचीगण, जो स्वर्गीय डॉ. संजीव कुमार वर्मा के विधिक उत्तराधिकारी हैं, के द्वारा की गई शिकायत यह है कि स्वर्गीय डॉ. संजीव कुमार वर्मा को 12.10.2010 को विधिवत गठित चयन समिति द्वारा कॉलेज में रीडर के पद पर पदोन्नति के लिए विचार किया गया था, लेकिन इसके बावजूद, उन्हें कभी भी वैध रूप से पदोन्नति नहीं दी गई थी। इस संबंध में कॉलेज के प्राचार्य द्वारा विभिन्न

प्राधिकारियों जैसे कि डीन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय और सहायक रजिस्ट्रार, दिल्ली विश्वविद्यालय को लिखे गए कई पत्रों का संदर्भ दिया गया है। यह अविवादित है कि डॉ. संजीव कुमार वर्मा का कई स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से जूझने के बाद 19.11.2018 को निधन हो गया। निस्संदेह 2010 से 2018 तक डॉ. संजीव कुमार वर्मा ने विधिक उपायों का सहारा नहीं लिया और कॉलेज के प्राचार्य द्वारा लिखे गए पत्रों पर ही निर्भर रहे। उनकी मृत्यु के बाद, याचिकाकर्ता सं. 1 ने प्रत्यर्थीगण को क्रमशः 21.09.2020 और 05.04.2021 को दो कानूनी नोटिस भेजे। याचीगण का मामला यह नहीं है कि चयन समिति द्वारा डॉ. संजीव कुमार वर्मा को पदोन्नति देने की सिफारिश की गई थी।

10. विलंब और लापरवाही के कारण याचिका की पोषणीयता के संबंध में प्रत्यर्थीगण की ओर की गई प्रारंभिक आपत्ति को ध्यान में रखते हुए, पहले प्रारंभिक मुद्दे की जांच करना अनिवार्य होगा। तथ्यात्मक विवरण से यह स्पष्ट है कि डॉ. संजीव कुमार वर्मा ने 2010 से 2018 तक अपने जीवनकाल के दौरान कोई कदम नहीं उठाया, यह जानते हुए कि उनके मामले पर चयन समिति द्वारा विचार किया गया था, लेकिन परिणाम सामने नहीं आ रहा था। 2018 में उनकी असामयिक मृत्यु के बाद भी, याचिकाकर्ता सं. 1 ने न्यायलय का रुख नहीं किया और केवल कानूनी नोटिस भेजे। विश्वविद्यालय ने दिनांक 26.06.2023 के आदेश के द्वारा पदोन्नति के दावे को खारिज कर दिया, लेकिन उसके बाद भी, यह याचिका एक वर्ष के बाद दायर की गई। इसलिए,

समग्र रूप से देखा जाए, तो यह याचिका याचिकाकर्ता सं. 1 के पति के पक्ष में कथित वाद हेतुक के 14 साल बाद दायर की गई है और इस प्रकार श्री रूपल के तर्क में दम है कि याचिका विलंब और लापरवाही से वर्जित है। ***पी.एस. सदाशिवस्वामी बनाम तमिलनाडु राज्य, (1975) 1 एस.सी.सी. 152 में***, उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि पदोन्नति को चुनौती देने वाली 14 साल बीत जाने के बाद दायर याचिका पर विचार नहीं किया जा सकता है और यदि कोई व्यक्ति अपने से अधिक कनिष्ठ को पदोन्नत करने के आदेश से व्यथित है, तो उसे ऐसी पदोन्नति के कम से कम 6 महीने या अधिकतम एक वर्ष के भीतर याचिका दायर करनी चाहिए। उच्चतम न्यायालय ने यह भी कहा कि हालांकि अनुच्छेद 226 के तहत न्यायालयों के लिए अपनी शक्ति का प्रयोग करने के लिए कोई परिसीमा-काल नहीं है और न ही यह कहा जा सकता है कि ऐसा कोई मामला कभी नहीं होगा जहां कोई न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है, लेकिन सामान्य स्थिति में, अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण शक्तियों का प्रयोग करने से इनकार करना अधिकार क्षेत्र का एक उचित और बुद्धिमत्तापूर्ण प्रयोग होगा, यदि याचिकाकर्ता राहत के लिए शीघ्रता से न्यायालय का रुख नहीं करता है और केवल खड़ा रहता है, चीजों को होने देता है और फिर न्यायालय में पुराने दावे पेश करने तथा तय मामलों को अस्थिर करने का प्रयास करता है। ***रामचन्द्र शंकर, देवधर और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य, (1974) 1 एस.सी.सी 317*** में उच्चतम न्यायालय की संविधान न्यायपीठ ने पदोन्नति और वरिष्ठता को

चुनौती देने में विलंब के प्रभाव के मुद्दे पर विचार किया था और यह अभिनिर्धारित किया था कि विलम्बित अवस्था में वरिष्ठता के किसी भी दावे को अस्वीकार कर दिया जाना चाहिए क्योंकि यह वरिष्ठता, रैंक और पदोन्नति के संबंध में अन्य व्यक्तियों के निहित अधिकारों को बाधित करना चाहता है, जो उन्हें बीच की अवधि के दौरान प्राप्त हुए हैं।

11. ***रामशरण बनाम अध्यक्ष भारतीय तेल निगम लिमिटेड, 2022 एस.सी.सी. ऑनलाइन दिल्. 3982*** में इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ के हालिया फैसले का उल्लेख करना लाभदायक होगा, जिसमें न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:-

> *"6. यह सुस्थापित है कि यदि किसी व्यक्ति को ऐसे समय में पदोन्नति से वंचित किया जाता है जब वह हकदार है, तो उसे अपनी शिकायतों को व्यक्त करने के लिए न्यायलय का रुख करने का अधिकार है, और यह तर्क देना कि उसे अनदेखा करने का कोई कानूनी औचित्य नहीं था और नियोक्ता उसे अनदेखा करते हुए दूसरों को पदोन्नति का लाभ नहीं दे सकता था। हालाँकि, यह भी समान रूप से सुस्थापित है कि कर्मचारी इस तर्क के साथ पुराने दावों को उठाने के लिए न्यायालय का रुख विलंब से नहीं कर सकते हैं कि वे अपने अभ्यावेदन पर विचार करने की प्रतीक्षा कर रहे थे। यह बार-बार अभिनिर्धारित किया गया केवल अभ्यावेदन दाखिल करने से पक्षकार को समय-सीमा से नहीं बचाया जाएगा, और यह कि विलंब और लापरवाही न्यायालयों का एक प्रासंगिक कारक है जो इस प्रश्न को निर्धारित करता है कि आवेदक द्वारा किया गया दावा विचार के योग्य है या नहीं। यह भी सुस्थापित है कि कर्मचारी की ओर से विलंब और लापरवाही उसे उस लाभ से वंचित कर सकती है जो दूसरों को दिया गया था। भारत के संविधान का अनुच्छेद 14, इस प्रकार की स्थिति में, लागू नहीं होगा क्योंकि यह सर्वविदित है कि विधि उन लोगों के पक्ष में झुकता है जो सजग और सतर्क रहते हैं [तमिलनाडु बनाम शेषचलम, (2007) 10 एस.सी.सी. 137: देखें]।*

xxx xxx xxx

8. उपरोक्त पैराग्राफ को उच्चतम न्यायालय ने उत्तरांचल राज्य बनाम शिव चरण सिंह भंडारी, (2013) 12 एस.सी.सी. 179 में उल्लिखित किया था, और निम्नलिखित टिप्पणी किया था:

"27. हम इस बात से पूरी तरह अवगत हैं कि इस मामले में पदोन्नति संवर्ग में वरिष्ठता को बाधित नहीं किया गया है तथा किसी भी पदोन्नति में बाधा नहीं आनी चाहिए। सुस्थापित स्थिति में बदलाव नहीं हो सकती है, लेकिन एक गर्भवती, प्रत्यर्थीगण ने रिप वैन विंकल (ऐसा व्यक्ति जो परिवर्तनों के प्रति अनभिज्ञ है) की तरह सोने का विकल्प चुना और अपनी मर्जी से नींद से उठे, जिसका कारण केवल वे ही समझ सकती हैं। परन्तु खुद से कारणों की ऐसी समझ विधि में मान्य नहीं है। जो कोई भी अपने अधिकार के प्रति लापरवाह रहता है, उसे नुकसान उठाना पड़ता है। जैसा कि हम समझते हैं कि न तो अधिकरण और न ही उच्च न्यायालय ने इन पहलुओं को उचित परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन किया है और इस आधार पर आगे बढ़ा है कि किसी कनिष्ठ को पदोन्नत किया गया था और इसलिए, वरिष्ठों को पदोन्नति से वंचित नहीं किया जा सकता है।

28. विलंब और लापरवाही के तथ्य से अनभिज्ञ रहना तथा राहत प्रदान करना सभी सुस्थापित सिद्धांतों के विपरीत है तथा यहां तक कि इसमें विवेकाधिकार की अवधारणा भी दूर-दूर तक लागू नहीं होती। हम यह भी कह सकते हैं कि यह उन सभी परिस्थितियों में लागू नहीं हो सकता है जहां मौलिक अधिकारों की कुछ श्रेणियों का उल्लंघन होता है। लेकिन, पदोन्नति लाभ पाने के पुराने दावे पर अधिकरण द्वारा विचार नहीं किया जाना चाहिए था और न ही उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिए था।

XXX XXX XXX

10. *उक्त सिद्धांतों को वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू करते हुए, अपीलकर्ता के अनुसार, उसे पदोन्नति से वंचित कर दिया गया, जबकि 1994 में उसे ग्रेड सी अधिकारी के पद पर पदोन्नत किया जाना था। यह सच है कि, ग्रेड डी अधिकारी के रूप में उनकी पदोन्नति में देरी हुई थी, जिसमें अपीलकर्ता के अनुसार उन्हें 1998 में ग्रेड डी अधिकारी के रूप में पदोन्नत किया जाना चाहिए था, जबकि वास्तव में उन्हें 2001 में पदोन्नत किया गया था। इसी तरह, ग्रेड ई अधिकारी के रूप में उनकी पदोन्नति में देरी हुई, जिसमें उनके अनुसार, उन्हें 2002 में पदोन्नत किया*

जाना चाहिए था, जबकि उन्हें वास्तव में 2006 में पदोन्नत किया गया था, और ग्रेड एफ अधिकारी के रूप में भी, जिसमें उन्हें वास्तव में 2014 में पदोन्नत किया गया था, जबकि अपीलकर्ता के अनुसार उन्हें 2005 में ही पदोन्नत किया जाना चाहिए था।

11. *यह मानते हुए कि अपीलकर्ता ने 2019 में इस न्यायालय का रुख किया था, तब भी यह उसकी पहली पदोन्नति से 25 साल के बाद ही हुआ था, जो उसके अनुसार उसे 1994 में दिया जाना चाहिए था, लेकिन वास्तव में 1995 में दिया गया था। यह कहने के अलावा कि उसके साथ जाति के आधार पर भेदभाव किया गया है और उसने राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग तथा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति कल्याण संबंधी संसदीय समिति के समक्ष भी कुछ अभ्यावेदन दिए हैं और वह न्यायलय का रुख करने के नतीजों से डर रहा था, अपीलकर्ता ने यहां कोई स्वीकार्य कारण नहीं दिया है कि उसने विलंब से न्यायलय का रुख क्यों किया है। पदोन्नति के लिए दावा समानता और न्यायसंगतता की अवधारणा पर आधारित है, लेकिन उक्त राहत का दावा उचित समय के भीतर किया जाना चाहिए [संदर्भ: गुलाम रसूल लोन बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य, (2009) 15 एस.सी.सी. 321]।*

12. *हालाँकि* सूक्ष्मता से, याचीगण के विद्वान वकील द्वारा यह तर्क देने की कोशिश की गई कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत न्यायालय की शक्तियाँ व्यापक और असाधारण हैं और याचिका पर न्याय के हित में विचार किया जा सकता है। इस बात पर कोई विवाद नहीं है और न ही हो सकता है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय की शक्तियां असाधारण हैं, लेकिन यह भी समान रूप से सुस्थापित है कि अनुच्छेद 226 के तहत राहत विवेकाधीन है और उच्चतम न्यायालय ने बार-बार स्पष्ट किया है कि अनुच्छेद 226 के तहत राहत देने से इनकार करने का एक आधार यह है कि याचिका अति विलंब से दायर की गई है, जिसके लिए कोई

संतोषजनक स्पष्टीकरण नहीं है। इस संदर्भ में, मैं ***दुर्गा प्रसाद बनाम आयात और निर्यात के मुख्य नियंत्रक, (1969) 1 एस.सी.सी. 185*** में उच्चतम न्यायालय के फैसले से एक अंश को उद्धृत करना चाहता हूं, जो इस प्रकार है:

> *"4. श्रीमती नारायणी देवी खेतान बनाम बिहार राज्य [1964 का सि.अ. संख्या 140/1964; निर्णय दिनांक 22 सितंबर] में संविधान न्यायपीठ की ओर से बोलते हुए, मुख्य न्यायाधीश गजेंद्रगडकर ने कहा:*
>
> > *"यह सुस्थापित है कि अनुच्छेद 226 के तहत, उच्च न्यायालय की उचित रिट जारी करने की शक्ति विवेकाधीन है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि कोई नागरिक अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय जाता है और यह तर्क देता है कि किसी भी कार्यकारी कार्रवाई से उसके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन हुआ है, तो उच्च न्यायालय स्वाभाविक रूप से उसे राहत देना चाहेगा; लेकिन ऐसे मामले में भी, यदि याचिकाकर्ता अति विलंब का दोषी रहा है, और अन्य प्रासंगिक परिस्थितियां हैं जो इंगित करती हैं कि उच्च न्यायालय के लिए याचिकाकर्ता के पक्ष में अपने उच्च विशेषाधिकार अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करना अनुचित होगा, तो न्याय के उद्देश्यों के लिए यह आवश्यक हो सकता है कि उच्च न्यायालय को एक रिट जारी करने से इनकार कर देना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि यह दर्शाया जाता है कि अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर करने वाला पक्षकार, वस्तुतः, ऐसी राहत का दावा कर रहा है, जो रिट याचिका दायर किए जाने के समय परिसीमा कानून के तहत वर्जित थी, तो उच्च न्यायालय अपने रिट अधिकार क्षेत्र में कोई भी राहत देने से इंकार कर देगा। इस बारे में कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता है कि उच्च न्यायालय को कब किसी ऐसे पक्षकार के पक्ष में अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने से इनकार करना चाहिए जो काफी विलंब के बाद याचिका दायर करता है और अन्यथा लापरवाही का दोषी है। यह एक ऐसा मामला है जिसे उच्च न्यायालय के विवेक पर छोड़ दिया जाना चाहिए और सभी मामलों को न्यायलय के विवेक पर छोड़ दिया जाना चाहिए, इस मामले में भी विवेकाधिकार का प्रयोग विवेकपूर्ण और उचित रूप से किया जाना चाहिए।*

13. ***त्रिदीप कुमार डिंगल और अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य, (2009) 1 एस.सी.सी. 768,*** विशेष रूप से, पैरा 56 में एक अन्य निर्णय का भी संदर्भ दिया जा सकता है, जो निम्नानुसार है:

> *"56. हम इस तर्क को बरकरार रखने में असमर्थ हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मौलिक अधिकार का त्याग नहीं किया जा सकता है। लेकिन संविधान के अनुच्छेद 32, 226, 227 या 136 के तहत विवेकाधीन अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते समय, यह न्यायालय कुछ कारकों को ध्यान में रखता है और इनमें से एक कारक आवेदक की ओर से रिट न्यायालय जाने में होने वाली विलंब और लापरवाही है। यह सुस्थापित है कि रिट जारी करने की शक्ति विवेकाधीन है। संविधान के अनुच्छेद 32 या 226 के तहत राहत देने से इनकार करने का एक आधार यह है कि याचिकाकर्ता विलंब और लापरवाही का दोषी है।*

14. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह आग्रह किया गया कि कॉलेज के प्रधानाचार्य द्वारा बार-बार पत्र भेजे जा रहे थे और इसलिए, याचिकाकर्ता सं. 1 के पति को यह धारणा थी कि मामला विचाराधीन है। याचिकाकर्ता सं. 1 ने अपने पति की पदोन्नति का मामला उठाने के लिए कानूनी नोटिस भी भेजे थे, और यह न्यायलय का रुख करने में हुई विलंब को सही ठहराता है। बार-बार अभ्यावेदन देना और लगभग 14 वर्षों तक उनके निपटान की प्रतीक्षा करना विलंब के लिए क्षमा मांगने का औचित्य नहीं हो सकता है, विशेष रूप से तब, जब दावा वर्ष 2010 से पूर्वव्यापी रूप से पदोन्नति से संबंधित हो, जिसका उन लोगों की वरिष्ठता पर भी प्रभाव पड़ सकता है जिन्हें इस बीच रीडर के रूप में पदोन्नत किया गया था और उनकी कोई गलती नहीं थी। यह सुस्थापित विधि है कि अभ्यावेदन परिसीमा अवधि को बढ़ाते या माफ नहीं करते हैं। [संदर्भ,

सुरजीत सिंह साहनी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, 2022 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 249 और ***त्रिपुरा राज्य और अन्य बनाम अरबिंद चक्रवर्ती और अन्य, (2014) 6 एस.सी.सी. 460***]।

15. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय ने पाया कि रिट याचिका विलंब और लापरवाही से वर्जित है, जो एक चिरप्रचलित और स्थायी सिद्धांत है और इसे न्यायालयों द्वारा प्रारंभ में ही लागू किया जाना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि पुराने दावों पर विचार नहीं किया जाएगा, विशेष रूप से पदोन्नति के मामलों में और उन कर्मचारियों की वरिष्ठता स्थिति पर परिणामी प्रभाव, जिन्होंने इस बीच पदोन्नति प्राप्त की है और वरिष्ठता में वे ऊपर चले गए हैं। हालांकि यह न्यायालय विलंब और लापरवाही के इस सिद्धांत पर विचार करने के लिए इच्छुक नहीं है, फिर भी, इस न्यायालय के लिए याचिकाकर्ता सं. 1 के पति को इस कारण से पदोन्नति देना संभव नहीं है कि रीडर के पद पर पदोन्नति के लिए पात्रता की शर्तों में से एक के रूप में, याचिकाकर्ता सं. 1 के पति को अध्यादेश XVIII में उल्लिखित एम.पी.एस. के अनुसार पुनश्चर्या पाठ्यक्रम (रिफ्रेशर कोर्स) से गुजरना आवश्यक था, जो कि दिनांक 26.06.2023 के आदेश में विश्वविद्यालय का स्पष्ट रुख है। इसलिए, यह मानते हुए कि तर्क के लिए, भले ही न्यायालय को डॉ. संजीव कुमार वर्मा के मामले में रीडर के रूप में पदोन्नति के लिए पुनर्विचार का निर्देश देना था, पुनश्चर्या पाठ्यक्रम (रिफ्रेशर कोर्स) के अभाव में पदोन्नति नहीं

दी जा सकती है, जो स्वाभाविक रूप से नहीं किया जा सकता है, क्योंकि डॉ. संजीव कुमार वर्मा ने 19.11.2018 को बीमारियों के कारण निधन हो गया था।

16. उपरोक्त सभी कारणों से, रिट याचिका को जुर्माना के संबंध में कोई आदेश दिए बिना, खारिज किया जाता है।

न्या. ज्योति सिंह,

12 जुलाई, 2024/शिवम/डी.यू.

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*